National Journal of Multidisciplinary Research and Development
www.newresearchjournal.com
ISSN: 2455-9040
Received: 01-12-2025, Accepted: 03-01-2026, Published: 21-01-2026
Volume 11, Issue 1, 2026, Page No. 37-39

पंचायती राजनीति और पितृसत्तात्मक सत्ता का आलोचनात्मक विवेचन : नीलाक्षी सिंह की कहानी "साया कोई" के संदर्भ में

बाबू लाल बेनीवाल[1], डॉ. भगवान सिंह सोलंकी[2]
[1] सहायक आचार्य, राजकीय महाविद्यालय कोटड़ा, उदयपुर, राजस्थान, भारत
[2] शोध निर्देशक, प्राचार्य, श्री भीखाभाई पटेल इंस्टिट्यूट ऑफ पी जी स्टडीज एंड रिसर्च एंड ह्यूमैनिटीज़, आणंद, राजस्थान, भारत

सारांश
समकालीन हिंदी कथा–साहित्य में पंचायत, लोकतंत्र और स्त्री–प्रतिनिधित्व जैसे विषयों को केंद्र में रखकर अनेक रचनाएँ सामने आई हैं, किंतु उनमें बहुत कम ऐसी हैं जो लोकतांत्रिक व्यवस्था के भीतर छिपी पितृसत्तात्मक संरचनाओं को इतनी सूक्ष्मता और तीव्रता से उद्घाटित करती हों, जितनी कि नीलाक्षी सिंह की कहानी "साया कोई"। यह कहानी एक ग्रामीण, निःसंतान, श्रमशील स्त्री के माध्यम से पंचायत–राजनीति की उस विडंबनात्मक संरचना को उजागर करती है, जिसमें स्त्री को सत्ता का प्रतीकात्मक चेहरा बनाकर पुरुष वर्ग वास्तविक सत्ता का उपभोग करता है। प्रस्तुत शोध–पत्र का उद्देश्य यह विश्लेषण करना है कि किस प्रकार पंचायती लोकतंत्र में स्त्री आरक्षण, पितृसत्तात्मक सोच के अधीन एक 'मुखौटा व्यवस्था' में बदल जाता है और कैसे कहानी की नायिका अंततः इस व्यवस्था को एक मौन, किंतु निर्णायक प्रतिरोध के माध्यम से चुनौती देती है।

मूल शब्दः पंचायती राजनीति, पितृसत्ता, स्त्री प्रतिनिधित्व, लोकतंत्र, आरक्षण, मौन प्रतिरोध, साया कोई

भारतीय लोकतंत्र की जड़ें ग्राम–स्तर की पंचायत व्यवस्था में निहित मानी जाती हैं। पंचायत को लोकतंत्र की प्रयोगशाला कहा गया है, जहाँ सत्ता सीधे जनता के हाथों में होती है। संविधान के 73वें संशोधन द्वारा स्त्रियों के लिए आरक्षण का प्रावधान इसी उद्देश्य से किया गया था कि ग्रामीण समाज में स्त्रियाँ राजनीतिक निर्णय–प्रक्रिया का हिस्सा बनें। किंतु व्यवहार में यह व्यवस्था अनेक अंतर्विरोधों से घिरी हुई दिखाई देती है।

नीलाक्षी सिंह की कहानी "साया कोई" इसी अंतर्विरोध को केंद्र में रखती है। यह कहानी यह प्रश्न उठाती है कि क्या स्त्री आरक्षण वास्तव में स्त्री–सशक्तिकरण का माध्यम बन पाया है या वह पितृसत्तात्मक सत्ता के हाथों एक औपचारिक उपकरण भर बनकर रह गया है। कहानी की नायिका एक मेहनती, कुशल और साक्षर ग्रामीण स्त्री है, किंतु निःसंतान होने के कारण सामाजिक दृष्टि से हाशिए पर रखी जाती है। पंचायत चुनाव में उसका चयन उसकी योग्यता के कारण नहीं, बल्कि उसकी 'नियंत्रणीयता' के कारण होता है।

"साया कोई" केवल एक व्यक्तिगत स्त्री–कथा नहीं है, बल्कि वह पंचायत–राजनीति, लोकतंत्र और पितृसत्ता के आपसी गठजोड़ का आलोचनात्मक दस्तावेज है। इस बिंदु पर कहानी लोकतंत्र की उस वास्तविकता को सामने लाती है, जहाँ स्त्री को सत्ता का चेहरा तो बनाया जाता है, पर निर्णय का अधिकार उससे छीन लिया जाता है।

पंचायती राजनीतिः आदर्श और व्यवहार का द्वंद्व

पंचायती राजनीति का आदर्श स्वरूप सहभागिता, पारदर्शिता और समानता पर आधारित माना जाता है। सिद्धांततः पंचायत वह मंच है जहाँ समाज के कमजोर वर्ग अपनी बात कह सकते हैं और स्थानीय समस्याओं का समाधान खोज सकते हैं। किंतु "साया कोई" में चित्रित पंचायत–राजनीति इस आदर्श से भिन्न दिखाई देती है।

कहानी में पंचायत चुनाव एक जनपर्व की तरह प्रस्तुत होता हैकृ नारे, प्रचार, भाषण और चुनाव–चिह्नों की चकाचौंध। पर इस बाहरी चमक के भीतर सत्ता का असली खेल धन, जाति और प्रभाव के सहारे खेला जाता है। उम्मीदवारों का चयन जनता की आकांक्षाओं से नहीं, बल्कि सत्ता–संतुलन की गणनाओं से तय होता है।

स्त्री उम्मीदवार को आगे किया जाता है ताकि पर्दे के पीछे बैठे पुरुष सत्ता का वास्तविक नियंत्रण बनाए रख सकें। पंचायत यहाँ जन–इच्छा की अभिव्यक्ति न होकर सत्ता के वैध हस्तांतरण का साधन बन जाती है। यह स्थिति लोकतंत्र की मूल भावना का खंडन करती है।

इस बिंदु पर कहानी यह स्पष्ट करती है कि पंचायती राजनीति का संकट केवल भ्रष्टाचार या हिंसा तक सीमित नहीं है, बल्कि वह संरचनात्मक है। जब तक निर्णय लेने की प्रक्रिया में वास्तविक भागीदारी नहीं होगी, तब तक पंचायत लोकतंत्र का सशक्त माध्यम नहीं बन सकती। "साया कोई" इसी यथार्थ को रेखांकित करती है।

पितृसत्तात्मक सत्ता की संरचना

"साया कोई" में पितृसत्ता किसी एक व्यक्ति की मानसिकता नहीं, बल्कि एक संगठित संरचना के रूप में उपस्थित है। पति, बहनोई (मेहमान), पंडित और पूँजीपतिकृये सभी मिलकर एक ऐसा सत्ता–तंत्र बनाते हैं, जिसमें स्त्री की भूमिका केवल प्रतीकात्मक रह जाती है।

पति स्वयं निष्क्रिय और आत्महीन है, पर मुखिया पद की संभावना उसे सामाजिक प्रतिष्ठा और पुरुषार्थ का अवसर देती है। बहनोई अवसरवादी है, जो हर परिस्थिति में अपना हित साधता है। पंडित विचारधारा और नैतिकता का आवरण प्रदान करता है, जबकि पूँजीपति धन और हिंसा के माध्यम से सत्ता को नियंत्रित करता है।

इन सभी पात्रों की सामूहिक रणनीति यह है कि स्त्री को आगे रखकर सत्ता का उपभोग किया जाए। स्त्री की सहमति को उसकी चुप्पी से जोड़ दिया जाता है और उसके निर्णयों को पहले से तय मान लिया जाता है।

यह संरचना पितृसत्ता के उस मूल सिद्धांत को उजागर करती है, जिसमें स्त्री को स्वतंत्र सत्ता–संरचना के रूप में स्वीकार नहीं किया जाता। वह केवल एक माध्यम हैकृएक सायाकृजिसके सहारे पुरुष सत्ता अपनी वैधता बनाए रखती है। कहानी इस संरचना

की आलोचना करते हुए पितृसत्ता के सामाजिक और राजनीतिक चेहरे को उजागर करती है।

स्त्री आरक्षण : सशक्तिकरण या मुखौटा

संविधान में स्त्री आरक्षण का उद्देश्य स्त्रियों को राजनीतिक निर्णय–प्रक्रिया में भागीदार बनाना था। पर "साया कोई" में यह आरक्षण एक विडंबनात्मक रूप ले लेता है। स्त्री उम्मीदवार का चयन उसकी चेतना या नेतृत्व क्षमता के आधार पर नहीं, बल्कि इस आधार पर होता है कि वह 'निरबंसी' है और उसे नियंत्रित किया जा सकता है।

कहानी में स्त्री पढ़ी–लिखी है, फिर भी उसे कभी निर्णय लेने की स्वतंत्रता नहीं दी जाती। उसके भाषण लिखे जाते हैं, उसकी रणनीति तय की जाती है और उसके नैतिक द्वंद्व को 'भावुकता' कहकर नकार दिया जाता है।

यह स्थिति यह प्रश्न उठाती है कि क्या आरक्षण अपने आप में सशक्तिकरण की गारंटी है। कहानी का उत्तर नकारात्मक है। जब तक सामाजिक चेतना में परिवर्तन नहीं होगा, तब तक आरक्षण पितृसत्ता के लिए एक सुरक्षित रास्ता बना रहेगा।

इस बिंदु पर "साया कोई" स्त्री आरक्षण की सीमाओं को उजागर करती है और यह संकेत देती है कि सशक्तिकरण केवल संवैधानिक प्रावधानों से नहीं, बल्कि मानसिक और सामाजिक बदलाव से संभव है।

चुनावी हिंसा और सत्ता की नैतिकता

नीलाक्षी सिंह की कहानी "साया कोई" में चुनावी हिंसा का प्रसंग पंचायती राजनीति की नैतिक खोखलेपन को उजागर करने वाला सबसे सशक्त बिंदु है। एक गरीब बच्ची का जीप के नीचे कुचलकर मर जाना केवल एक दुर्घटना नहीं, बल्कि सत्ता–संरचना की संवेदनहीनता का प्रतीक बन जाता है। यह घटना यह स्पष्ट करती है कि पंचायत–राजनीति में नैतिकता, मानवीय संवेदना और न्याय जैसे मूल्य सत्ता–सुविधा के सामने कितने असहाय हो जाते हैं।

घटना के तुरंत बाद जिस प्रकार धन, प्रभाव और प्रशासनिक दबाव के माध्यम से मामला "निपटा" दिया जाता है, वह लोकतांत्रिक व्यवस्था के पतन को दर्शाता है। यहाँ कानून न्याय का माध्यम नहीं, बल्कि सत्ता का उपकरण बन जाता है। पीड़ित परिवार को मुआवज़े के नाम पर चुप करा दिया जाता है और समाज इस अन्याय को मौन स्वीकृति दे देता है। यह मौन सामूहिक नैतिक पतन का संकेत है।

कहानी की नायिका इस घटना से भीतर तक झकझोर दी जाती है। उसका अपराधबोध केवल इसलिए नहीं है कि वह सत्ता–खेमे का हिस्सा है, बल्कि इसलिए भी कि उसकी चुप्पी इस अन्याय को वैधता देती है। इसके विपरीत मुसमातिन का विरोध सत्ता के लिए असुविधाजनक बन जाता है और उसे 'पगली' या 'अविवेकी' ठहराकर हाशिए पर धकेल दिया जाता है।

मौन प्रतिरोध : स्त्री की राजनीतिक चेतना

"साया कोई" में प्रतिरोध का स्वर मुखर नहीं, बल्कि अत्यंत सूक्ष्म और मौन है। यही इसकी सबसे बड़ी वैचारिक शक्ति है। कहानी की नायिका पूरे चुनाव अभियान के दौरान एक कठपुतली की तरह इस्तेमाल की जाती है। उसके शब्द, उसके विचार और उसके निर्णयकृसब पहले से तय होते हैं। किंतु मतदान कक्ष में प्रवेश करते ही वह पहली बार सत्ता–संरचना से बाहर, पूर्णतः अकेली खड़ी होती है।

यह क्षण स्त्री की राजनीतिक चेतना के जागरण का क्षण है। दीवारों पर लिखे वर्ण, शिक्षा और विवेक के प्रतीक बनकर उसके सामने आते हैं। वह समझ पाती है कि उसकी तथाकथित "पढ़ी–लिखी" पाँच उँगलियाँ दरअसल गुलामी में जकड़ी हुई हैं, जबकि एक साधारण अंगूठाकृजिसे निरक्षरता का प्रतीक माना जाता हैकृवास्तव में स्वतंत्र निर्णय का माध्यम बन सकता है।

अपनी इसी चेतना के बल पर वह अपने ही चुनाव–चिह्न को अस्वीकार कर प्रतिद्वंद्वी के पक्ष में मतदान करती है। यह निर्णय न तो भाषण है, न नारा और न ही प्रत्यक्ष विद्रोह, बल्कि एक गहन नैतिक हस्तक्षेप है। यह पितृसत्तात्मक सत्ता के लिए सबसे बड़ा खतरा है, क्योंकि यह उसी स्त्री से आता है जिसे सबसे कमजोर समझा गया था।

निष्कर्ष

नीलाक्षी सिंह की कहानी "साया कोई" पंचायती राजनीति और पितृसत्तात्मक सत्ता के आपसी संबंधों को अत्यंत स्पष्टता और संवेदनशीलता के साथ उद्घाटित करती है। यह कहानी इस निष्कर्ष तक पहुँचाती है कि पंचायत जैसी लोकतांत्रिक संस्था, जो सिद्धांततः समानता और सहभागिता पर आधारित है, व्यवहार में अक्सर पितृसत्ता के विस्तार का माध्यम बन जाती है। स्त्री आरक्षण जैसे संवैधानिक प्रावधान भी तब तक वास्तविक सशक्तिकरण नहीं दे पाते, जब तक सामाजिक और मानसिक संरचनाओं में परिवर्तन नहीं होता।

कहानी की नायिका को मुखिया पद का उम्मीदवार बनाया जाना लोकतंत्र की सफलता का नहीं, बल्कि उसकी अंतर्निहित कमजोरी का संकेत है। उसे सत्ता इसलिए नहीं सौंपी जाती कि वह निर्णय ले सके, बल्कि इसलिए कि उसके माध्यम से पुरुष वर्ग परदे के पीछे से शासन कर सके। पति, बहनोई, पंडित और पूँजीपति जैसे पात्र यह सुनिश्चित करते हैं कि स्त्री केवल नाममात्र की प्रतिनिधि बनी रहे। इस प्रकार पंचायत व्यवस्था जनसत्ता की संस्था न रहकर पितृसत्तात्मक नियंत्रण का उपकरण बन जाती है।

फिर भी कहानी निराशा में समाप्त नहीं होती। मतदान कक्ष में स्त्री द्वारा लिया गया अंतिम निर्णय इस पूरी सत्ता–संरचना पर एक मौन लेकिन प्रभावशाली प्रतिरोध है। यह निर्णय दर्शाता है कि स्त्री की चेतना को दबाया जा सकता है, किंतु समाप्त नहीं किया जा सकता। वह पहली बार अपने 'साये' से बाहर निकलकर नैतिक स्वतंत्रता का प्रयोग करती है।

इस निष्कर्ष के माध्यम से नीलाक्षी सिंह यह स्पष्ट करती हैं कि पंचायती राजनीति का वास्तविक लोकतंत्रीकरण तभी संभव है, जब स्त्री को केवल प्रतिनिधि नहीं, बल्कि स्वतंत्र निर्णयकर्ता के रूप में स्वीकार किया जाए।

संदर्भ ग्रंथ

1. सिंह, नीलाक्षी –जिनकी मुट्ठियों में सुराख था; सेतु प्रकाशन, नोएडा (उत्तर प्रदेश); 2022
2. चन्द्र, कृष्णकुमार–साठोत्तरी हिन्दी उपन्यासों में राजनीतिक चेतना; दिनमान प्रकाशन, दिल्ली; 1984
3. राय, कुसुम –स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी उपन्यास साहित्य की सामाजिक चिंता; अमन प्रकाशन, कानपुर; 2011
4. कुलकर्णी, शोभा –आठवें दशक के उपन्यासों का समाजशास्त्रीय अध्ययन,शैलजा प्रकाशन, कानपुर; प्रथम संस्करण, 2011
5. दुबे, रमा–उत्तर आधुनिक समाज और विज्ञापन; विकास प्रकाशन, कानपुर; 2012
6. अज्ञेय –साहित्य, संस्कृति और समाज परिवर्तन की प्रक्रिया; सस्ता साहित्य मंडल, नई दिल्ली; 2010
7. पाण्डेय, शिवशंकर –हिन्दी कहानी का वर्तमान चिंतन और संदर्भ; ज्ञान प्रकाशन, कानपुर; 2011
8. सांगोले, शिवाजी –हिन्दी कथा साहित्य में ग्रामीण चेतना; समता प्रकाशन, कानपुर; 2006

9. वर्मा, शिवराज–स्त्री विमर्श के प्रश्न और भारतीय समाज ;राज पब्लिशिंग हाउस ; 2012
10. सरौद, पीताम्बर–आधुनिक हिन्दी उपन्यासों में राजनीतिक एवं आर्थिक चेतना; अतुल प्रकाशन, कानपुर; 1987
11. गौतम, लक्ष्मणदत्त–आधुनिक हिन्दी कहानी साहित्य में प्रगतिचेतना; कोणार्क प्रकाशन, दिल्ली; 1972
12. शरण, गिरिराज – ग्रामीण जीवन की कहानियाँ; प्रभात प्रकाशन, नई दिल्ली; 2002
13. चौधरी, वनमाला–हिन्दी कहानी में नारियों की पारिवारिक समस्याएँ; क्लासिकल पब्लिशिंग कम्पनी, नई दिल्ली, 2008
14. कांबले, बाबा साहेब – हिन्दी साहित्य में महानगरीय नारी जीवन; समता प्रकाशन, कानपुर, 2003